FOREWORD

Since its establishment in 1976, Acharya Nagarjuna University has been forging ahead in the path of progress and dynamism, offering a variety of courses and research contributions. I am extremely happy that by gaining a B++ (80-85) grade from the NAAC in the year 2003, the University has achieved recognition as one of the front rank universities in the country. At present Acharya Nagarjuna University is offering educational opportunities at the UG, PG levels apart from research degrees to students from about 447 affiliated colleges spread over the three districts of Guntur, Krishna and Prakasam.

The University has also started the Centre for Distance Education with the aim to bring higher education within reach of all. The Centre will be a great help to those who cannot join in colleges, those who cannot afford the exorbitant fees as regular students, and even housewives desirous of pursuing higher studies. With the goal of bringing education to the doorstep of all such people, Acharya Nagarjuna University has started offering B.A. and B.Com courses at the Degree level and M.A., M.Com., M.Sc, M.B.A. and LL.M. courses at the PG level from the academic year 2003-2004 onwards.

To facilitate easier understanding by students studying through the distance mode, these self-instruction materials have been prepared by eminent and experienced teachers. The lessons have been drafted with great care and expertise within the stipulated time by these teachers. Constructive ideas and scholarly suggestions are welcome from students and teachers involved respectively. Such ideas will be incorporated for the greater efficacy of this distance mode of education. For clarification of doubts and feedback, weekly classes and contact classes will be arranged at the UG and PG levels respectively.

It is my aim that students getting higher education through the Centre for Distance Education should improve their qualification, have better employment opportunities and in turn facilitate the country's progress. It is my fond desire that in the years to come, the Centre for Distance Education will grow from strength to strength in the form of new courses and by catering to larger number of people. My congratulations to all the Directors, Academic coordinators, Editors and Lesson - writers of the Centre who have helped in these endeavours.

Prof. Y. R. Haragopal Reddy
Vice - Chancellor
Acharya Nagarjuna University

M.A. HINDI FIRST YEAR

PAPER-2: THEORY OF LITERATURE
SYLLABUS

(1) Indian theory of Literature:

(1)

(a) Rasa tradition- -The history of Rasa, The concept of Rasa, Rasa sutra of Bharata and the Nishpatti (emergence) of Rasa, Sadharanikaran (identification), The form of Rasa, earthly or heavenly; Enjoyment of Rasa; Rasa, blissful or sorrowful.

(b) Dhwani Tradition: The History of Dhwani tradition: Origin of Dhwani; Different types of Dhwani; Different stages of Dhwani; Opinions opposed to Dhwan

(c) Ouchitya (propriety)—The concept of Ouchitya and harmony among its parts.

(2)

(a) Alankara tradition—The concept of Alankara, The History of Alankara tradition, Classification; Alankara and Rasa.

(b) Reeti tradition- - Reeti and Style; eeti and Guna; The nature of the poet and Reeti.

(c) Vakrokti tradition - -The concept of Vakrokti; Vakrokti and its history; Different types; Swabhavokti and Vakrokti; word and meaning; Nature of the poet and poetic process; Vakrokti and Expression.

(3) Western theory of Literature (Ancient):

a) Plato—Doctrine of poetic inspiration and stress on Imitation.

b) Aristotle- -New interpretation to Imitation; His concept of Trasadi in detail.

c) Longinus- - Kavya men udatta (sublimation) tatva; The concept of udatta.

Western theory of Literature (Modern):

(4) I.A. Richards – Mulya siddhanta (Value based theory); different uses of language; the qualities of a critic. Dr. T.S. Eliot- -Parampara aur Vaiyaktic Pragna (tradition and individual talent); Vastunishta Samikaran (Objective correlative); Nirvaiyaktikata ka siddhanta (the principle of negative capability); Classical and the Romantic. A.R. Levis- -Study of Value.

(5) Marxist criticism: Basis and the first book; Literature and class struggle; Literature and thought process; Critical realism and socialistic realism; Commitment in literary criticism. Existentialism; Formalism{ Rupvad]; Russian formalism; Prague Formalism; French formàlism; American new criticism.

(6) Study of literary forms: Study of poetic forms- -Mahakavya (Epic), Khanda kavya,(Narrative poetry) Mukta kavya (Free verse), Lyrical poetry. A study of the nature and form of other literary genres: Plays and one act plays; Novel and short story, essay, sketch, memoir, biography etc.

TEXT BOOKS

1.Bharatiya aur Pastatya kavyashastra- -Dr. Archana Srivastav, Vishvavidyalay Prakashan, Varanasi, Chouk, P.B. No.1142, Varanasi-221001.

2. Bharatiya Sahitya Sastra- - Acharya Baldev Upadhaya, Nandkishore & sons, Chouk, Varanasi-221001.

3. Pastatya Kavyashastra ke Siddhanta- -Dr. Shantiswarup Gupta, Ashok Prakashan, Nayee Sadak, Delhi 6.

4. Bharatiya Kavyashastra ki Bhumika- -Dr. Bhagirath Mishra.

REFERENCE BOOKS

1. Siddhant aur Adhyayan—Gulab Roy, Atmaram & Sons, Delhi.
2. Kavya ke Roop- -Gulab Roy, Atmaram & Sons, Delhi.
3. Pastatya Kavyashastra - -Devendranath Sharma, National publishing House, Delhi.
4. Bharatiya Kavyashastra –Parampara aur prayog - -Dr. Harmohan,--Archana Publishing House, New Delhi.

(DHNIND 02)

M.A. (Previous) DEGREE EXAMINATION, MAY 2009
(Examination at the end of First Year)
Hindi
Paper II - THEORY OF INDIAN AND WESTERN LITERATURE

Time : Three hours **Maximum : 100 marks**

सूचना : किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

सभी प्रश्नों के अंक समान हैं।

(5 x 20 = 100)

1. भरत मुनि के रस सिद्धांत का विवेचन कीजिए।
2. ध्वनि क्या है? ध्वन संप्रदाय करते हुए रीति और शैली के अंतर को समझाइए।
3. रीति की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए रीति और सैली के अंतर को समझाइए।
4. अलंकार की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए अलंकारों का वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए।
5. वक्रोक्ति की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए वक्रोक्ति संप्रदाय के इतिहास को समझाइए।
6. अरस्तु के काव्य सिद्धांतों का परिचय दीजिए।
7. लांजाइनस के काव्य सिद्धांतों पर प्रकाश डालिए।
8. टी.यस. इल्यिट के काव्य सिद्धांतों की समीक्षा कीजिए।
9. अस्तिरववादी सिद्धातों का परिचय दीजिए।
10. किन्हीं दो विषयों पर टिप्पणी लिकिए।
    (1) महाकाव्य के लक्षण
    (2) आई.ए. रिचर्डस के काव्य सिद्धांत
    (3) उपन्यास और नाटक का अंतर
    (4) निबंध के तत्व

भारतीय तथा पाश्चात्य काव्य - शास्त्र

अनुक्रमणिका

प्रथम भाग : भारतीय काव्य - शास्त्र

1.	रस सिद्धान्त	1.1 - 1.6
2.	अलंकार संप्रदाय और उसके सिद्धान्त	2.1 - 2.7
3.	रीति संप्रदाय	3.1 - 3.3
4.	ध्वनि संप्रदाय	4.1 - 4.6
5.	वक्रोक्ति संप्रदाय	5.1 - 5.4
6.	औचित्य संप्रदाय और उसके सिद्धान्त	6.1 - 6.3
7.	नाटक	7.1 - 7.4
8.	महाकाव्य	8.1 - 8.3
9.	गीतिकाव्य	9.1 - 9.2
10.	उपन्यास	10.1 - 10.4
11.	कहानी	11.1 - 11.3
12.	निबन्ध	12.1 - 12.5
13.	जीवनी	13.1 - 13.4
14.	पत्र	14.1 - 14.2
15.	एकांकी	15.1
16.	रिपोर्ताज	16.1
17.	आत्मकथा	17.1
18.	रेखाचित्र	18.1
19.	संस्मरण	19.1

(भारतीय) प्राचीन काव्य शास्त्र

पाठ - 1

रस सिद्धान्त

प्र.1. रस सिद्धान्त क्या है, चर्चा कीजिए।

(अथवा)

रस निष्पत्ति की व्याख्या कीजिए।

(अथवा)

रस सिद्धान्त के विभिन्न आचार्यों के मत स्पष्ट कीजिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. प्रवर्तक
3. भावों का वर्गीकरण
4. रस के विभिन्न अंग
5. भट्टलोल्लट का उत्पत्तिवाद
6. शंकुक का अनुमितिवाद
7. भट्टनायक का भोगवाद
8. अभिनवगुप्त की अभिव्यक्ति
9. आधुनिक विद्वानों के मंतव्य
10. उपसंहार

1. प्रस्तावना :-

रस शब्द भारतीय संस्कृति और साहित्य का प्रमुख अंग है। अध्यात्मिक क्षेत्र में 'रस' को भगवान बताया गया है। रसो वै सः - रस ही परमात्मा है - नारायणोमनिषत। साहित्यकारों के अनुसार काव्यानन्द रस का साधारणीकरण ब्रह्मानन्दसहोदर कहलाता है।

2. प्रवर्तक :-

रस सिद्धान्त के प्रवर्तक आचार्य भरतमुनि माने जाते हैं। नाट्य शास्त्र के आधार पर उन्होंने बताया कि - विभाव अनुभाव तथा व्यभिचारी भावों के संयोग से रसं की निष्पत्ति होती है - विभावानुभाव व्यभिचारी संयोगात् रसनिष्पत्तिः। कालानुसार भट्टलोल्लट, शंकुक, भट्टनायक और अभिनवगुप्त प्राचीन आचार्यों ने रस के बारे में अपना - अपना मत प्रकट किया। फिर रामचन्द्रशुक्ल, श्यामसुन्दर दास, नगेन्द्र और गुलाब राय ने रस सिद्धान्त के बारे में अपनी - अपनी सम्मति दी।

3. भावों का वर्गीकरण :-

रस सिद्धान्त में काव्य का लक्षण पाठक को आनन्दानुभूति प्रदान करना है। इस काव्यानन्द का दूसरा नाम 'रस' है। यह आनन्दानुभूति या रसानुभूति पाठक प्राप्त करता है। पाठक का हृदय विविध भावनाओं से उद्वेत्तित होता है। रस सिद्धान्त के अनुसार भावों का प्रधानतया दो रूपों में वर्गीकरण किया जाता है।

1. स्थायी भाव और
2. संचारी भाव

स्थायी भाव धीरे - धीरे विकसित होता है और दीर्घ काल तक हृदय में स्थित रहता है। उदाहरण के लिए प्रेम, घृणा उत्साह आदि। संचारी भाव विद्युत की तरह क्षण में अचानक प्रकट होता है और साथ ही लुप्त हो जाता है। रोष, हर्ष, भय आदि परिस्थिति के अनुसार संचारी भाव के रूप में प्रकट होते हैं।

आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार भावों के दो रूप हैं -

1. एमोशण और
2. सेंटिमेंट

एमोशण संचारी भाव का पर्यायवाची है और सेंटिमेंट स्थायीभाव का। सेंटिमेंट भावात्मक प्रवृत्ति है। स्थायीभाव (सेंटिमेंट) चिर काल तक वासना के रूप में स्थित रहता है, और आलंबन से संबंध रखता है। संचारी भाव दीर्घ काल तक मन में स्थिर नहीं रहते। रस गंगाधरकार ने लिखा है - स्थायीभाव जीवन के दीर्घ काल तक आश्रय (पाठक) के हृदय में स्थिर रहता है। उदाहरण के लिए प्रेम, भक्ति आदि।

डॉ. नगोन्द्र ने सेटिमेंट को मनोवृत्ति भावना कहा और एमोशण को मनोविकार कहा।

4. रस के विभिन्न अंग :-

भरत मुनि ने भावनाओं के तीन स्थर बताये - विभाव, अनुभाव और संचारी भाव। भावोत्तेजना का मूल कारण विभाव कहलाता है। विभाव के पुनः दो भेद माने जाते हैं।

1. आलंबन और
2. उद्दीपन

मानव हृदय में भावनाओं को जगाने वाली कोई वस्तु मा दृश्य की कल्पना आलंबन है (विषय वस्तु आलंबन है, वर्णित वस्तु आलंबन है)। उदाहरण के लिए सिंह को देखकर हमारे हृदय मे भय उत्पन्न होता है। यहाँ सिंह आलंबन है। यहाँ सिंह हमारे हृदय में भय का कारण बन जाता है। इसलिए वह उद्दीपन भी है। अगर सिंह कही पिंजडे में बन्धा हुआ होगा तो हमें किसी प्रकार का भय नहीं होता, और सिंह यहाँ उद्दीपन का काम नहीं करता।

उदा :-

उद्यान में रमणी का मनोहार रूप प्रिय के लिए उद्दीपन का काम करता है, लेकिन श्मशान भूमि में नहीं कयों कि उद्दीपन के लिए वातावरण का सानुकूल होना चाहिए।

जिस व्यक्ति के हृदय में आलंबन और उद्दीपन के प्रभाव से भाव की उत्पत्ति होती है, वह आश्रय कहलाता है। भावों के प्रभाव से आश्रय की शारीरिक और मानसिक अवस्था में होने वाला परिवर्तन 'अनुभाव' कहलाता है। हृदयगत भावों की व्यंजना अनुभावों के माध्यम से प्रकट होती है। एक ही स्थायीभाव के बीच - बीच में परिस्थितियों के कारण अनेक भावों का भी संचार होता है। उदाहरण के लिए प्रेम स्थायी भाव है। प्रेम में होने वाले संयोग से 'हर्ष' उत्पन्न होता है और वियोग के कारण 'दुख' उत्पन्न होता है। यहाँ 'हर्ष' और 'दुख' संचारी भाव हैं। संचारी भाव स्थायी भाव के विकास में सहायक होते हैं।

काव्यगत **स्थायी भाव की अनूभूति पाठक को होने** पर उसे 'रसानुभूति' कहते हैं। रसानुभूति ही रस - निपत्ति है।

5. भट्टलोल्लट का उत्पत्तिवाद :-

भट्टलोल्लट ने भरत मुनि द्वारा प्रयुक्त शब्दों की व्याख्या मौलिक रूप में की है। 'संयोग' का तात्पर्य उन्होंने संबंध या मेल बताया और निष्पत्ति का अर्थ उत्पत्ति बताया। उनका कथन है - विभावों से रस की उत्पत्ति होती है, संचारियों से पुष्टि होती है, और अनुभावों से अभिव्यक्ति होती है। इस प्रक्रिया को समझने के लिए दही की लस्सी का उदाहरण लेले। दही, पानी, बर्फ और चीनी डाल कर मथकर लस्सी तैयार की जाती है। यहाँ दही मूल द्रव्य है। जिससे लस्सी तैयार होती है। पानी, बर्फ और चीनी लस्सी बनाने में पुष्टिकारक हैं। मंथन क्रिया से लस्सी तैयार हो जाती है। यहाँ दही - विभाव है। पानी बर्फ, चीनी आदि संचारी हैं। झाग - अनुभाव है। इस प्रकार भट्टलोल्लट ने रस निष्पत्ति को रस उत्पत्तिवाद कहा है।

यहाँ उत्पत्तिवाद का नाम भ्रामक है। निष्पत्ति के अन्तर्गत उत्पत्ति पुष्टि और अभिव्यक्ति को लोल्लट ने स्थान दिया है।

रस निष्पत्ति के सम्बन्ध मे एक समस्या है कि - रस की स्थिति नट के हृदय में होती है या दर्शक के हृदय में होती है। लोल्लट के अनुसार स्थायीभाव की स्थिति मूल पात्रों में ही होती है। नाटक अधिकांश ऐतिहासिक होते हैं। अतः मूल भाव या स्थायी भाव की स्थिति मूल पात्रों में ही रहती है। अभिनेता उन पात्रों का अनुकरण करते हैं। दर्शक या पाठक अभिनेताओं पर मूल पात्रों का आरोपण करके रस का अनुभव प्राप्त करते हैं। उदाहरण के लिए राम और रावण का युद्ध देखकर दर्शकगण रसानुभव या रसानुभूति का अनुभव करते हैं।

अभिनेता कल्पना के द्वारा मूल पात्रों का अनुकरण करते हैं। वे मूल पात्रों का साक्षात्कार कवि के माध्यम से करते हैं। उदाहरण के लिए कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तलम नाटक में दुष्यन्त और शकुन्तला का अभिनय अभिनेता कल्पना तथा अनुभूति के द्वारा करते हैं। इस से पाठक या दर्शक भी रसानुभूति प्राप्त कर लेते हैं। इस में रसानुभूति का कारण प्रत्यक्ष रूप नहीं बल्कि मिथ्या रूप विधान है। रजितपट पर हम नाटक का अनुभव करते हैं। वे भी सहज रूप न होकर मिथ्या रूप - विधान ही हैं। सडक पर हम वास्तविक भिक्षुक को देखकर घृणा प्रकट करते हैं और कभी चोर को घर में घुसते हुए देखकर शोर मचाते हैं। लेकिन रंगमंच पर भिखारी या चोर के अभिनय को देखकर हम रसानुभव की प्राप्ति करते हैं । रंगमंच के कुछ दृश्यों को छोटे बच्चे या नये दर्शक सत्य समझते हैं। उत्पत्ति, सृष्टि और अभिव्यक्ति की कल्पना करके भट्टलोल्लट ने रस निष्पत्ति को सहज और बोधगम्य बनाया।

6. शंकुक का अनुमितिवाद :-

श्री शंकुक 'निष्पति' का अर्थ अनुमिति तथा संयोग का अर्थ अनुमान मानते हैं। रस सामग्री - विभाव, अनुभाव और संचारी - के आधार पर पाठक या दर्शक रस का अनुमान करता है। इसलिए शंकुक ने निष्पत्ति का अर्थ अनुमिति कहा।

यहाँ प्रश्न उठता है अनुमान बुद्धि की प्रक्रिया है और रस हृदरागत वस्तु है। तब दोनों का सामंजस्य कैसे हो सकता है!

न्याय शास्त्र के अनुसार ज्ञान के चार साधन माने जाते हैं -

1. प्रत्यक्ष प्रमाण
2. अनुमान
3. उपमान और
4. शब्द

यहाँ अनुमान के पुनः तीन प्रकार माने जाते हैं।

1. पूर्ववत
2. शेषवत और
3. सामान्यतो दृष्ट

प्रत्यक्ष कारण को देखकर अप्रत्यक्ष कार्य की कल्पना करना पूर्ववत अनुमान है।

उदाहरण - बादलों को देखकर वर्षा का ज्ञान होना।

प्रत्यक्ष कार्य को देखकर अप्रत्यक्ष कारण का अनुमान करना शेषवत है।

उदाहरण - किसी छात्र को अछे अंक प्राप्त करते देखकर उसके परिश्रम का अनुमान करना।

सामान्य अनुभव के आधार पर अप्रत्यक्ष कारण का अनुमान करना सामान्यतो दृष्ट है।

उदाहरण - प्रति वर्ष सावन मास में वर्षा होती है, तो इस साल भी होगी।

यहाँ विभाव पूर्ववत अनुमान है, अनुभाव शेषवत अनुमान है और संचारी भाव सामान्यतो दृष्ट अनुमान है। यह एक प्रकार से शंकुक कीअनुमिति को अनुभूति कह सक्ते हैं।

अनुमिति वाद के लिए 'चित्र - तुरंग - न्याय' उदाहरण के रूप में दे सकते हैं। कहीं दीवार पर घोडे के चित्र को देखकर हमें अनुमिति या अनुभूति होती है। अभिनेताओं के अभिनय में हम मूल पात्रों की अनुमिति या अनुभूति प्राप्त करते हैं।

7. भट्टनायक का भोगवाद :-

भोग का अर्थ है - अनुभव 'भट्टनायक ने संयोग का अर्थ भक्ति या योग बताया'। उनके अनुसार काव्य का रूप शब्दात्मक है। शब्दात्मक काव्य की तीन क्रियाएँ हैं -

1. अभिधा
2. भावकत्व (भावना) और
3. भोजकत्व (भोगना)

भावना के द्वारा हमारे हृदय को अनुभूति की प्राप्ति होती है । अभिधा के द्वारा शब्द के सामान्य अर्थ का ही बोध होता है । भावकत्व की प्रक्रिया के कारण प्रप्ति होने वाली अनुभूति साधारणीकरण कहलाती है। यहाँ पाठक और काव्य वस्तु दोनों का एकाकार हो जाता है।

उदाहरण के लिए पानी में नमक का घुल जाना। यहाँ काव्य वस्तु पानी है और नमक पाठक । जिस प्रकार पत्थर पानी में नहीं घुलता उसी प्रकार जो सहृदय पाठक नहीं होता वह काव्यानन्द नहीं प्राप्त कर सकता।

साधारणीकरण तापस का लक्षण है। रजोगुण और तमो गुण वाले इसकाअनुभव नहीं कर सकते। साधारणीकरण के कारण हमारी आत्मा से रजोगुण और तमोगुण लुप्त हो जाते हैं। साधारणीकरण से पाठक के हृदय में रसानुभव होता है और आनन्द की अनुभूति होती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में यही हृदय की मुक्तावस्था है।

8. अभिनवगुप्त की अभिव्यक्ति :-

अभिनवगुप्त केअनुसारे 'संयोग' का अर्थ - व्यंजना है, और निष्पत्ति का अर्थ अभिव्यक्ति है। भाव हमारे हृदय में पहले से ही रहते हैं । काव्य हमारी भावाभिव्यक्ति का साधन मात्र है। हमारे हृदय में काव्य के कारण नये भावों की सृष्टि नहीं होती।

9. आधुनिक विद्वानों के मंतव्य :-

डॉ. श्यामसुन्दर दास ने साधारणीकरण को योग की मधुमति भूमिका के समतुल्य बताया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार साधारणीकरण ब्रह्मानन्द सहोदर है। डॉ. नगोन्द्र का कथन है - काव्य के माध्यम से पाठक को कवि की अनुभूति का साधारणीकरण होता है।

10. उपसंहार :-

रस सिद्धान्त का महत्त्व -

दर्शन, समाज, राजनीति, साहित्य आदि की दृष्टि से रस सिंद्धान्त महत्वपूर्ण है। अद्वैत सिद्धान्त के अनुसार आत्मा परमात्मा के तीनों गुणों - सत, चित और आनन्द से युक्त है। काव्य और कलाओं द्वारा मानव में अन्तर्निहित आनन्द को जगृत किया जा सकता है। रस सिद्धान्त आनन्दानुभूति का विवरण देता है। मानव की आत्मा रसानुभूति के द्वारा माया का आवरण (प्राकृतिक लक्षण) पारकर आनन्द की प्राप्ति करती है। इसी को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने बाताया है - **हृदय की मुक्तावस्था का नाम ही रस दशा है।** रस सिद्धान्त के अनुसार कलाओं का लक्ष्य कलाकार के आनन्द के साथ - साथ सामाजिक आनन्द भी है।

कविकर्म में तीन अवस्थाँयें होती हैं।

1. कवि द्वारा विषय की अनुभूति
2. कवि द्वारा अभिव्यक्ति और
3. पाठक के द्वारा रसास्वादन

रस सिद्धान्त जीवन के सभी पक्षों को काव्य में स्थान देता है। काव्य का सर्व प्रमुख तत्त्व - भाव है। भावों के कारण ही काव्य, काव्य का रूप धारण करता है। रस सिद्धान्त भाव - तत्त्व की व्याख्या करता है।

जब तक काव्य या साहित्य का संबन्ध मानवीय भावनाओं से पुष्ट रहेगा तब तक रस सिद्धान्त का महत्त्व परिपुष्ट रहेगा।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

पाठ : 2

अलंकार संप्रदाय और उसके सिद्धान्त

प्र.2. अलंकार संप्रदाय क्या है ? उसके सिद्धान्तों को समझाइए।

रुपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. कुछ आचार्यों के मत - अलंकार संप्रदाय की परंपरा
3. अलंकार की परिभाषा
4. अलंकारों का वर्गीकरण
5. अलंकारों के भेद
6. अलंकारों का महत्त्व
7. उपसंहार

1. प्रस्तावना :-

अलंकार का शब्दिक अर्थ है - सुशोभित करने वाला या जिस से सुशोभित होता है। काव्य शास्त्र में अलंकारों का महत्त्व पूर्ण स्थान है। अलंकार सौन्दर्य के पर्यायवाची के रूप में भी ग्रहण किया गया है। संस्कृत में विशिष्ट कथन शैली को अलंकार कहते हैं।

2. कुछ आचार्यों के मत - अलंकार संप्रदाय की परंपरा :-

भारतीय काव्य संप्रदायों में रस के बाद अलंकार संप्रदाय ही आता है। भरतमुनि ने नाट्य शास्त्र में उपमा, रूपक, यमक, दीपक आदि अलंकारों की विवेचना की है। छठी शताब्दी में भामह ने काव्यालंकार ग्रन्थ के द्वारा अलंकार संप्रदाय की स्थापना की। भामह ने अलंकार को काव्य का अनिवार्य तत्त्व माना। वैसे तो अलंकार संप्रदाय के बहुत से आचार्य हुए हैं। उन में से कुछ आचार्य इस प्रकार हैं।

	आचार्य	ग्रन्थ	शती
1.	भामह	काव्यालंकार	छटवीं
2.	दण्डी	काव्यादर्श	सातवीं
3.	वामन	काव्यालंकार सूत्र	आठवीं
4.	उट्भट	काव्यालंकार सार संग्रह	आठवीं
5.	रुद्रट	काव्यालंकार	नवीं
6.	कुन्तक	वक्रोक्ति जीवित	ग्यारहवीं
7.	रुय्यक	अलंकारसर्वस्व	बारहवीं
8.	जयदेव	चन्द्रालोक	तेरहवीं

हिन्दी रीतिकाल में अनेक अलंकारवादी कवि हुए। लेकिन उनके ग्रन्थ एक प्रकार संस्कृत ग्रन्थों के ही छायानुवाद हैं।

3. अलंकार की परिभाषाः-

अलंकार का सामान्य अर्थ है - जिस प्रकार अभूषण शरीर की शोभा को बढ़ाते हैं, उसी प्रकार काव्य में अलंकार अर्थ ग्रहण में शोभा बदाते हैं। अलंकार कदापि शरीर के अंग नहीं बन सकते। उसी प्रकार काव्य में भी अलंकार मूल विषय वस्तु के अंग नहीं हो सकते। अलंकार काव्य शैली से सम्बन्धित तत्त्व है।

कुछ आचार्यों के मत -

1. भामह ने अलंकार को काव्य का अनिवार्य तत्त्व माना है। जिस प्रकार कान्ता - वनिता का मुख भूषणों से रहित होने पर पूर्ण रूप से शोभित नहीं होता, उसी प्रकार अलंकार रहित काव्य शोभा विहीन होता है।
2. दण्डी ने अलंकार को काव्य का सर्वस्व माना है। इन्होंने गुण को भी अलंकार माना है। और रस, भाव आदि को भी अलंकार के अन्तर्गत माना है।
3. आचार्य वामन ने अलंकार को समस्त काव्य सौन्दर्य का परिचायक माना है। उनके अनुसार गुणयुक्त अलंकारों से साधारणतः युक्त तथा दोष रहित शब्द और अर्थ ही काव्य है। मम्मट् ने भी इसी काव्य परिभाषा को अपनाया।
4. जयदेव के अनुसार अलंकार शून्य शब्दार्थ से भी काव्य बन सक्ता है।
5. रुद्रट ने रस का भी विवेचन किया है। कुन्तक ने अलंकार वादी विचार धारा को आगे बढ़ाया और एक नवीन दिशा प्रधान की।

उपर्युक्त विवेचन के द्वारा अलंकार काव्य का अनिवार्य तत्त्व माना जाता है। विविध आचार्यों ने विविध उक्तियों द्वारा अलंकार स्वरूप का स्पष्टीकरण किया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं - "विषय को पूर्णतया समझने के लिए कभी - कभी बात को घुमा फिराकर कहना पडता है। इस तरह भिन्न - भिन्न विधान और कथन के ढंग - अलंकार कहलाते हैं।

4. अलंकारों का वर्गीकरण :-

अलंकारों के शताधिक भेद किये गये हैं। उन में से पुनः समन्वय करके सात भेद वर्गीकृत किये गये हैं।

1. सादृश्य गर्भ - इस में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकार आते हैं।
2. विरोध मूल - इस में विरोध, विभावना और विशेषोक्ति अलंकार आते हैं।
3. श्रृंखला वद्ध - इस में कारण वाला, एकावली आदि अलंकार आते हैं।
4. तर्क न्यायमूल - इस में तर्क और न्याय द्वारा उक्ति को प्रभावशाली बनाया जा सकता है।
5. वाक्य न्यायमूल - तर्कपूर्ण सामान्य वाक्य के द्वारा वस्तु को प्रभावशाली बनाया जाता है।
6. लोक न्यायमूल - इस के द्वारा लोक व्यवहार को तत्त्वों द्वारा उक्ति में प्रभाव उत्पन्न किया जाता है।
7. गूढ़ार्थ - प्रतीतिमूल - इस में व्यंजना शक्ति का मूल रहता है।

उपर्युक्त अलंकारों का वर्गीकरण पूर्णतः संतोष जनक नहीं है। विविध आचार्य इस वर्गीकरण को असंगत मानते हैं।

5. अलंकारों के भेदः-

अलंकारों के प्राधानतया दो भेद है।

1. शब्दालंकार और
2. अर्थालंकार

1. शब्दालंकार :- शब्दालंकारों में अलंकार का सौन्दर्य शब्द विशेष की ध्वनि और अर्थ पर आश्रित होता है। उस शब्द को बदल देने पर अलंकार की शोभा नहीं रहती। शब्दालंकारों के पुनः उपभेद है। अनुप्रास, यमक, वक्रोक्ति, श्लेष आदि। अनुप्रास का प्रभाव प्रधानतया शब्द कीआवृत्ति पर आधारित होता है। कुछ उदाहरण देखें -

1. यमक - कनक - कनक ते सौगुनी मादकता अधिकाय
2. अनुप्रास - होरत - होरत हे सखी रह्या कबीर हिराई
3. अनुप्रास - रस सिंगार मज्जन किये
4. वक्रोक्ति - मैने कहा "प्रिये जाओ मत, बैठों।" वह भोली समझी 'जाओ, मत बैठो।'

(2)

2. **अर्थालकार :-** अर्थालकारों का सबंन्ध पूरे वाक्य से होता है। इनको विशेषतः सात वर्गों में विभाजित किया जाता है।

1. **उपमा :-** यह अधिक पहन्त्वपूर्ण अलंकार है। उपमा में वस्तु का सादृश्य किसी अन्य वस्तु से बताया जाता है। इस के पुनः चार अंग माने जाते हैं। (1) उपमेय - अर्थात वर्ण्य वस्तु (2) उपमान - जिस से साइश्य बताया जाता है (3) धर्म - दोनों वस्तुओं का सामान्य गुण (4) वाचक - इस से दोनों की तुलना का बोध होता है। जहाँ ये चार अंग पूर्ण रूप से होते हैं , उसे पूर्णोपमा अलंकार कहते हैं।

उदाहरण - तापस - बाला सी गंगा कल

ससि मुख से दीपित मृद कर - तल

लहरें उर पर कोमल कुन्तल

यहाँ गंगा - उपमेय है। तापस बाला - उपमान है। कल (सौन्दर्य) - सामान्य गुण धर्म हैं। और स्त्री - वाचक शब्द है।

2. **रूपक :-** उपमान, उपमेय का अभेदत्व बताना ही रूपक है।

उदाहरण :-

उम्बर पन घट में

डुबो रही तारा घट

उषानागरी

3. **उत्प्रेक्षा :-** इस में उपमान की कल्पना मात्र होती है।

उदाहरण :- उस का मुख मानो चान्द है।

वह लडका पेडों पर सदा खेलता रहता है, मानो वह बन्दर है।

उत्प्रेक्षा के तीन भेद हैं।

1. वस्तूत्प्रेक्षा
2. होतूत्प्रेक्षा
3. फलोत्प्रेक्षा

4. **अतिशयोक्ति अलंकार :-** अतिशयोक्ति में उपमेय का अतिशय वर्णन होता है। वास्तव में विषय बहुत दूर चले जाते हैं।

"इति आवति चलि जाति उत चली छसातक हाथ।
चढ़ी हिडोरै सै रहै, लगी उसासनु साथ।"

अतिशयोक्ति के पुनः चार भेद हैं।

1. रूपकातिशयोक्ति
2. भेदकातिशयोक्ति
3. असंबन्धातिशयोक्ति
4. कारणातिशयोक्ति

5. **दीपक अलंकार :-** दीपक अलंकार में उपमेय और उपमान दोनों के एक से गुणों का आख्यान होता है। (दोनों एक से लगते हैं)

उदाहरण - काहू के केहू घटाओ घटै नाहि,
सागर और गुण आगर पानी

6. **व्यकिरेक अलंकार :-** उपमेय को उपमान से भी अधिक वताना व्यतिरेक अलंकार है।

उदाहरण :- स्वर्ग की तुलना उचित ही है,
किन्तु वहाँ सुरसरिता कहाँ ? सरयू कहाँ !

7. **समासोक्ति :-** प्रस्तुत वर्णन के द्वारा अप्रस्तुत वर्णन ध्वनित होता है।

उदाहरण :- जग के दुख दैन्य शयन पर यह रुगणा बाला।
अरे कब से जाग रही वह आँसू की नीरवमाला।

8. **व्याज स्तुति :-** स्तुति के रूप में निन्दा और निन्दा के रूप में स्तुति होती है।

उदाहरण :- आप तो बडे विद्वान हैं ।
मूर्ख भी आप से डरता है।